RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015–17

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 45, अंक : 24 एक प्रति 2 : रुपये

कुल पृष्ठ : 8

रविवार 15 सितम्बर, 2019

विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120

दयानन्दाब्द : 195 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–45, अंक : 24, 12–15 सितम्बर 2019 तदनुसार 30 भाद्रपद, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

परमात्मा कर्मानुसार देह देता है और वाणी भी

ले०–स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

आ यो धर्माणि प्रथमः ससाद ततो वपूंषि कृणुषे पुरूणि।
धास्युर्योनिं प्रथम आ विवेशा यो वाचमनुदितां चिकेत।।

–अथर्व० ५।१।२

शब्दार्थ–यः = जो **प्रथमः** = सर्वप्रधान भगवान् **आ** = सबसे पूर्व **धर्माणि** = धर्मों, कर्त्तव्यों को **ससाद** = जानता है, **ततः** = तब **पुरूणि** = अनेक **वपूंषि** = शरीरों को **कृणुषे** = बनाता है। **धास्युः** = धाता होकर **प्रथमः** = पहले **योनिम्** = योनि में **आ+विवेश** = प्रवेश करता है, **यः** = जो **अनुदिताम्** = न बोली हुई **वाचम्** = वाणी को **चिकेत** = जानता है, सीखता है।

व्याख्या–(१) आ यो धर्माणि प्रथमः ससाद–सृष्टिरचना से पूर्व भगवान् रचने–योग्य पदार्थों का विचार करते हैं, किस–किस जीव का क्या–क्या कर्म हैं और उसके उपयुक्त फल तथा उसके भोगने के साधन कैसे होने चाहिएँ, इसका आलोचन करते हैं। वेदान्त में इसका नाम **'ईक्षण'** है। ऋग्वेद [१०।१९०।१] में **'ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत' [भगवान् के जाज्वल्यमान तप से ऋत और सत्य प्रकाशित हुए]** में यही बात कही गई है। **ऋत** = सृष्टि–नियम, **सत्य** = तदनुगामिनी कर्मफल–व्यवस्था। अथर्व में उन दोनों को धर्म शब्द से कहा गया है।

(२) ततो वपूँषि कृणुषे पुरूणि, तब–कर्मफलालोचन के पश्चात् अनेक वपुओं= शरीरों की रचना करता है। जैसे–जैसे जिसके कर्म हैं, वैसे–वैसे भगवान् उसके लिये भोग का अधिष्ठान, भोग का सामान विधान करता है।

(३) धास्युर्योनिं प्रथम आविवेश–कर्मफलों को धारण करता हुआ जीव शरीर में पहले घुसता है। इस वेदवचन से प्रतीत होता है कि गर्भाधान–क्रिया के समय पहले जीव जाता है, तभी शरीर बनता है, जीव प्रवेश न करे तो गर्भ की स्थिति ही नहीं होती।

(४) यो वाचमनुदितां चिकेत–इस खण्ड के दो अर्थ हैं। एक प्रभुपरक है–जो अनुच्चरित वाणी को भी जानता है, अर्थात् जो हमारी मानसिक मन्त्रणाओं को भी, जो हम वाणी पर नहीं लाये, जानता–पहचानता है, अथवा जो अनुच्चरित वाणी को समझता है–अर्थात् बोलने की युक्ति देता है। सीधे–सीधे शब्दों में वाणी भी वही देता है। दूसरा अर्थ जीवपरक है–जो न बोली हुई वाणी को समझता है। बालक जब स्वयं नहीं बोलता, तब भी माँ–बाप की बोली को समझता है।

इन चारों बातों पर तनिक–सा विचार किया जाए तो इनका सार यह प्रतीत होता है कि जीव भगवान् की दी योनि में आता–जाता है और वह योनि उसके कर्मों का फल है। ऋग्वेद में इस सिद्धान्त को इन शब्दों में कहा गया है–**'आ यो योनिं देवकृतं ससदा क्रत्वा ह्यग्निरमृताँ अतारीत्' [ऋ० ७।४।५]** जो भगवान् के रचे देह में रहता है, ज्ञानस्वरूप भगवान् उन जीवों को कर्म से तारता है। एक योनि से दूसरी योनि में भेजने तथा मुक्त करने को यहाँ तारना कहा गया है। भगवान् ही इस कार्य को कर सकता है, क्योंकि वह सर्वज्ञ है–**'सर्वं तद्राजा वरुणा वि चष्टे यदन्तरा रोदसी यत्परस्तात्। संख्याता अस्य निमिषो जनानाम्....।।' [अथर्व० ४।१६।५]** जो इस संसार में और जो कुछ इससे परे है, अन्तर्यामी जगद्राजा उसे जानता है, उसने तो प्राणियों के निमेषोन्मेष तक गिन रखे हैं।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

भद्रं भद्रं न आ भरेषमूर्जं शतक्रतो।
यदिन्द्र मृडयासि नः।।

–पू० २.२.६.९

भावार्थ–हे जगत्पितः! हमें पुरुषार्थी बनाओ, जिससे हम अन्न, रस आदि उत्तम–उत्तम पदार्थों को प्राप्त होकर सुखी हों। दूसरों के भरोसे रहते हुए, आलसी, दरिद्री बनकर आप ही अपने को हम दुःखी न बनावें। आपने हमें नेत्र, श्रोत्र, हस्त, पाद आदि इन्द्रियाँ उद्यमी बनने के लिए दी हैं, न कि आलसी बनने के लिए। आप उनकी ही सहायता करते हो, जो अपने पाँव पर आप खड़े रहते हैं इसलिए पुरुषार्थी बनकर जब हम आपसे सहायता माँगेंगे तब आप हमें अपनी आज्ञा में चलने वाले जानते हुए अवश्य सब सुख देंगे।

आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः।
न त्वामिन्द्रातिरिच्यते।।

–पू० ३.१.१.९

भावार्थ–हे दयानिधे परमात्मन्! हमारे मन की सब वृत्तियाँ आप में लग जाएँ। जैसे गंगा, यमुना, नर्मदा आदि नदियाँ बिना यत्न के समुद्र में प्रवेश करती हैं। ऐसे ही हमारे मन की सब वृत्तियाँ, आपके स्वरूप में लगी रहें, क्योंकि आपसे बढ़कर न कोई ऐश्वर्यवान् है और न सुखदायक दयालु है। हम आपकी शरण में आये हैं, हम पर कृपा करो, हमारा मन इधर–उधर की सब भटकनाओं को छोड़कर, परमानन्द और शान्तिदायक आपके ध्यान में मग्न हो जावे।

संस्कार

ले.-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

संस्कार वैदिक धर्म की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। ऋग्वेद में कहा गया है, मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्। हम मनुष्य बनें तथा देव संतानों को जन्म दें। वैदिक धर्म का लक्ष्य है सम्पूर्ण सृष्टि का निरन्तर विकास होते रहना चाहिए। हम सब मानव आपस में भाई-भाई हैं, हममें कोई छोटा नहीं है और न कोई हममें बड़ा है, हम सब एक ही ईश्वर की सन्तान है। हम अपना परिवार का तथा समाज का चरम बिन्दु तक विकास करें। मनुष्य ही नहीं हमें प्राणी मात्र को सुखी बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। संसार के सभी प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखते हुए सबके साथ निरन्तर आगे बढ़ते जाने का श्रम करना चाहिए। वेद में कहा भी है-**दृते दृऽ हं मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।**

पर यह होगा कैसे ? जन्म से तो सभी प्राणी एक समान होते हैं। मनुष्य में तथा पशुओं में समानता सी होती है परन्तु बाद में मनुष्य ज्ञान प्राप्त कर पशुओं से आगे निकल जाता है। वज्र उप. अत्रि सं. 142 में कहा भी है, जन्मना जायते शूद्रः संस्कारद्द्विज उच्यते। जन्म से तो सभी शूद्रवत् होते हैं परन्तु बाद में संस्कार के द्वारा विप्र बन जाते हैं। प्रश्न उपस्थित होता है कि ये संस्कार क्या हैं जो मनुष्य को शूद्र से ब्राह्मण बना देते हैं। संस्कार का अर्थ है किसी वस्तु के रूप को बदल देना, उसे एक नया रूप दे देना। जैसे खान से सोना, चांदी, लोहा, हीरा आदि निकाले जाते हैं उस समय उन पर गहरा मल जमा होता है, दूसरी धातुएं भी मिली हुई हो सकती हैं, उन्हें शुद्ध स्वरूप में प्राप्त करने के लिए ऊंचे तापक्रम पर अग्नि में तपाया जाता है, इससे उनका मल हट जाता है, दूसरी धातु भी अलग हो जाती है। इस क्रिया को धातुओं का संस्कार करना कहा जाता है। संस्कार के द्वारा वे हमें शुद्ध रूप में प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकार मनुष्य में मानवीय गुणों का आदान करने के लिए उसका विधिपूर्वक संस्कार किया जाता है। महर्षि चरक ने संस्कार की परिभाषा दी है, **'संस्कारों हि गुणान्तराधानमुच्यते'** अर्थात् संस्कार मनुष्य में पहले से विद्यमान दुर्गुणों को हटा कर उसकी जगह सद्गुणों का आधान कर देने का नाम है। इस दृष्टि से संस्कार मानव के नव निर्माण की योजना है। मूल रूप से संस्कार दो प्रकार के होते हैं, (1) मलापनयन और (2) अतिशयाधान। किसी दर्पण के ऊपर पड़े हुए धूल आदि सामान्य मल को वस्त्रादि से पहुंच कर हटा देना या स्वच्छ कर देना 'मलापनयन' कहलाता है और किसी तेजोमय पदार्थ द्वारा उस दर्पण को विशेष चमत्कृत कर देना, प्रकाशित कर देना 'अतिशयाधान' कहलाता है। बालक में सामान्य रूप से दिखाई देने वाले दोषों को उसे समझा कर दूर कर देते हैं। जैसे बालक को स्वच्छता का लाभ बता कर उसे गंदेपन से रहने से हटा देते हैं। उसे नीति शास्त्र का सामान्य ज्ञान देकर समाज में उचित ढंग से रहना सिखा देते हैं। उसे नियमित जीवन यापन का महत्व समझा कर नियमित्ता का उपासक बना देते हैं। इसी प्रकार उसको अन्य दूसरे सामान्य दुर्गुणों से भी मुक्त कर देते है परन्तु उसमें मानवता के उच्च गुणों का आधान करने के लिए सतत् अन्य दूसरे संस्कारों की भी आवश्यकता होती है। वैज्ञानिकों का कहना यह है कि हमारे शरीर की सम्पूर्ण क्रियाएं मस्तिष्क से नियंत्रित होती है। जैसे सूर्य से फोटोन्स की एक नदी निरन्तर बहती हुई सभी ग्रहों और उपग्रहों को प्रकाश एवं ऊर्जा प्रदान करती रहती है उसी तरह मस्तिष्क के ग्रे मेटर से न्यूरोन्स की एक धारा निरन्तर प्रवाहित होती रहती है और यह धारा ही मनुष्य को नाना प्रकार के कार्य करने को प्रेरित करती रहती है। इस धारा के प्रवाह से प्रभावित मनुष्य जिस कार्य विशेष में लगता है इस धारा में उसी के अनुरूप न्यूरोन्स प्रवाहित होने लगते है और उसे उस कार्य विशेष में कैसे सफलता प्राप्त की जा सकती है इसकी आवश्यक जानकारी देते रहते हैं। ये न्यूरोन्स हमें श्रेष्ठ लोगों के मार्ग में भी ले जा सकते है और अधर्म कार्य की तरफ भी प्रेरित कर सकते हैं। इस न्यूरोन्स की बहती हुई धारा को इस प्रकार नियंत्रित करना कि जिससे वह हमें श्रेष्ठ पुरूषों के मार्ग पर ही ले जाया करे, दुष्ट विचारों से दूर रखे, लगातार इस धारा प्रवाह पर ध्यान रखना आवश्यक है। वास्तव में इस धारा के प्रवाह को रोक देना ही चित्त वृत्ति निरोध है। यदि हम श्रेष्ठ चिंतन स्वाध्याय आदि में अपने को निमग्न कर दे तो फिर श्रेष्ठ न्यूरोन्स की धारा ही प्रवाहित होगी और यदि उसमें कुछ दुर्गुणों को प्रेरित करने वाले न्यूरोन्स भी होंगे तो वे उसी प्रकार दबकर अपना प्रभाव नहीं दिखा सकेंगे जैसे स्वच्छ जल की प्रवाहित नदी में बहता हुआ कूड़ा करकट भी आ जाता है परन्तु प्रभावहीन होकर या तो नीचे बैठ जाता है अथवा बह कर निकल जाता है। इस प्रक्रिया को हमारे ऋषि मुनि जानते थे अतः उन्होंने इस न्यूरोन्स के प्रवाह को नियंत्रित करने के लिए दैनिक पंचयज्ञों-ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ की तथा संस्कारों की व्यवस्था की। दैनिक पंचयज्ञों के द्वारा हम प्रतिदिन श्रेष्ठ कार्यों की तरफ ही प्रेरित होते है तथा संस्कारों के द्वारा हम सम्पूर्ण जीवन को श्रेष्ठ बनाकर जीवन के अंतिम लक्ष्य मोक्ष तक पहुंच सकते है।

अब हम संस्कारों के विषय में सामान्य चिंतन करते हैं। संस्कारों की संख्या पर आरम्भ से ही विद्वानों में कुछ मतभेद रहा है परन्तु रामायण, महाभारत, मनुस्मृति आदि में सोलह संस्कारों को ही मान्यता दी है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने निम्न सोलह संस्कारों को मान्यता दी है-गर्भाधान, पुंसवन, सीमान्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, वानप्रस्थ, सन्यास और अन्त्येष्टि स्वामी दयानन्द और मनुस्मृति में इतना ही भेद है कि स्वामी जी ने कर्णवेध को संस्कार माना है केशान्त (गोदान) को नहीं माना है तथा मनुस्मृति में गोदान को संस्कार माना है कणवेध को नहीं माना है। महर्षि अंगिरा ने 25 तथा गौतम ने 48 संस्कार माने हैं। संस्कारों का एक मात्र उद्देश्य यही है कि हम सदैव श्रेष्ठ जीवन यापन करे। अब हम संक्षिप्त में सोलह संस्कारों के विषय में चर्चा करते है। (1) गर्भाधान संस्कार-विधिपूर्वक संस्कार से युक्त गर्भाधान से श्रेष्ठ एवं सुयोग्य संतान होती। इस संस्कार से वीर्य संबंधी तथा गर्भ संबंधी दोषों का नाश हो जाता है। दोष मार्जन तथा क्षेत्र का संस्कार होता है। गर्भाधान के समय स्त्री-पुरूष जिस भाव से भावित होते हैं उसका प्रभाव उनके रज-वीर्य में भी पड़ता है। इस रज-वीर्य जन्य संतान में भी वे भाव प्रकट होते हैं। सुश्रुत संहिता शरीर स्थान 2.46.50 में इसी प्रकार कहा गया है-

आहार च चेष्टाभिर्यादृशोभिः समन्वितौः।
स्त्री पुंसौ समुपेयातां तयोः पुत्रोऽपि तादृशः।।

(2) पुंसवन-पुत्र की प्राप्ति के लिए शास्त्रों में पुंसवन संस्कार का विधान है। 'गर्भाद् भवेच्च पुंसूते पुंस्त्वरूप प्रति पादतम्' इस गर्भ से पुत्र हो इसलिए पुंसवन किया जाता है। चरक संहिता में कहा गया है कि जिन बातों से गर्भ की हानि की संभावना हो, गर्भवती स्त्री उन सबसे दूर रहे। मद उत्पन्न करने वाले पदार्थो का सेवन न करे। सवारी पर न चढ़े। इन्द्रियां जिसे न चाहे उसे छोड़ दे। इस संस्कार में गर्भवती स्त्री को वट वृक्ष का पत्ता अथवा उसकी जटा इस भावना से सुंघाई जाती है कि वट वृक्ष की तरह वे भी दीर्घ जीवन प्राप्त करे और श्रेष्ठ संतान को जन्म दे।

(3) सीमान्तोन्नयन-यह संस्कार इसलिए किया जाता है कि जिससे गर्भिणी स्त्री का मन सन्तुष्ट, आरोग्य, गर्भस्थिर, उत्कृष्ट होवे और प्रतिदिन बढ़ता जावे। पारस्कर गृह्य सूत्र के अनुसार यह संस्कार गर्भ धारण करने के छठे अथवा आठवें महीने में किया जावे, 'पुंसवनवत् प्रथमे गर्भे षष्टेऽष्टमे वा। पुंसवन संस्कार के तुल्य छठे या आठवें महीने में शुक्ल पक्ष में जिस दिन मूल आदि पुरूष नक्षत्रों से चन्द्रमा हो उसी दिन सीमान्तोन्नयन संस्कार करें। इस संस्कार में घृत युक्त यज्ञ शेष सुपाच्य पौष्टिक खिचड़ी अथवा चस (खीर) गर्भवती स्त्री को खिलाया जाता है। इससे यह संकेत भी दिया जाता है कि प्रसव पर्यन्त ऐसा ही सुपाच्य पौष्टिक भोजन उसे दिया जावेगा। इस संस्कार में पति ही पत्नी के बाल कंधे से ठीक करके उन्हें बांधता है। इसका अर्थ यह है कि अब परिवार के लोग इस बात का ध्यान रखे कि गर्भिणी स्त्री की शारीरिक स्थिति इस प्रकार की नहीं कि इसे गृह कार्यों में अधिक लगाया जा सकें।'

(क्रमशः)

सम्पादकीय

मातृभाषा हिन्दी का महत्त्व

प्रतिवर्ष हमारे देश में 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है क्योंकि 14 सितम्बर 1949 के दिन भारत की संविधान सभा ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया था। स्वाधीनता के संघर्ष के समय हिन्दी के प्रचार को स्वराज्य प्राप्ति के समान ही महत्त्व दिया जाता रहा था और सभी स्वाधीन देश अपना राजकाज अपनी देश की भाषा में करते हैं परन्तु खेद है कि आज भारत देश की अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी के होते हुए भी उसके स्थान पर अंग्रेजी भाषा को ज्यादा महत्व देते हैं। स्वतन्त्रता से पूर्व हिन्दी भाषा सशक्त थी, बेचारी नहीं। इसी के बल पर रावलपिंडी से लेकर ढ़ाका तक स्वतन्त्रता आन्दोलन चला। आजादी के इस महा आन्दोलन में हिन्दी भाषा ने ही देश को जोड़ने का काम किया। आज भी देश के अधिकांश भागों में हिन्दी भाषा बोली और समझी जाती है। इसलिए 14 सितम्बर को संविधान का निर्णय राष्ट्र की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था। इस महत्त्व के कारण इस दिवस को देश भर में विभिन्न संस्थाएं हिन्दी दिवस के रूप में मनाती हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात उम्मीद थी कि हिन्दी भाषा को उसका उचित स्थान मिलेगा परन्तु कुछ विकृत मानसिकता के शिकार लोगों ने स्वतन्त्रता के पश्चात भी हिन्दी भाषा का विरोध किया। संविधान में तो राष्ट्रभाषा का दर्जा दे दिया गया परन्तु यह दर्जा वास्तविकता से कोसों दूर है। आज आवश्यकता हिन्दी दिवस को मनाने की नहीं, हिन्दी को अपनाने की आवश्यकता है। जब तक हिन्दी भाषा को व्यवहार में नहीं अपनाएंगे तब तक हिन्दी दिवस मनाने का कोई औचित्य नहीं रह जाता। वर्ष में एक बार हिन्दी दिवस मनाने से इसकी उन्नति नहीं हो सकती।

मातृ सभ्यता, मातृभाषा और मातृभूमि के गौरव को प्रदर्शित करने वाला ऋग्वेद में एक प्रसिद्ध मन्त्र आया है-

इडा सरस्वती मही तिस्रो देवीः मयोभुवः।।
बर्हिः सीदन्तु अस्रिधः।।

इस मन्त्र में मातृसभ्यता, मातृभाषा और मातृभूमि इन तीनों को गौरव प्रदान करते हुए देवी कहकर सम्बोधित किया गया है। मन्त्र में कहा गया है कि यदि राष्ट्र का उत्थान करना चाहते हो तो इन तीनों देवियों को घर-घर में प्रकाशित करो। इनके प्रकाश से ही राष्ट्र का प्रकाश है। इनकी उन्नति से ही राष्ट्र की उन्नति है। इनके विकास से ही राष्ट्र का विकास है। किसी भी राष्ट्र का आधार उसकी संस्कृति, सभ्यता, मातृभाषा और मातृभूमि के प्रति अपनत्व और प्रेम की भावना होती है। जब राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक इनके ऊपर गर्व करता है तब राष्ट्र का गौरव बढ़ता है। परन्तु हमारे देश का दुर्भाग्य है कि हमारे देश में इन तीनों देवियों का अनादर है। हमारी लम्बी दासता का सबसे भयंकर दुष्परिणाम यह हुआ कि हम मातृ संस्कृति, मातृभाषा और मातृभूमि के लिए जो आदर और श्रद्धा होनी चाहिए , उससे शून्य हो गए। यह सब विनाश अंग्रेजी शिक्षा के कारण हुआ। अंग्रेजों का शासन हमारे देश की संस्कृति, सभ्यता, मातृभाषा रूपी उपवन के लिए आँधी के समान ही था जिसने हृदय और मस्तिष्क की भूमि में से श्रद्धा और आस्था की जड़ों को उखाड़ कर फैंक दिया।

आर्य समाज और हिन्दी भाषा

आर्य समाज हमेशा हिन्दी भाषा का पक्षधर रहा है। हिन्दी भाषा के उत्थान के लिए आर्य समाज ने अनेकोंआन्दोलन किए। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने 1875 के आर्य समाज की स्थापना बम्बई में की थी। महर्षि दयानन्द जन्मना गुजराती थे और उनकी सारी शिक्षा दीक्षा संस्कृत में हुई थी। आरम्भ में महर्षि संस्कृत में ही भाषण और लेखन कार्य किया करते थे। प्रचार के लिए जब कलकत्ता पधारे तो वहां भी संस्कृत में ही भाषण दिए जिसका अनुवाद दूसरे विद्वान् किया करते थे। बाबू केशवचन्द्र सेन की प्रेरणा से महर्षि दयानन्द ने यह अनुभव किया कि साधारण जनता तक अपने विचार पहुंचाने के लिए हिन्दी भाषा को अपनाना चाहिए। इसके पश्चात भारतीय जनता की एकता की दृष्टि से महर्षि ने हिन्दी भाषा को अपनाया और अपने सारे ग्रन्थ हिन्दी और संस्कृत में लिखे। महर्षि की इन भावनाओं और देश की एकता का ध्यान रखते हुए आर्य समाज ने हिन्दी भाषा के प्रचार प्रसार का भरपूर प्रयास किया। न केवल अपने मौखिक प्रचार, लेखन कार्य, पत्र-पत्रिकाओं और दूसरे साहित्य के माध्यम से हिन्दी को हर प्रकार से बढ़ावा दिया। इस प्रकार अपने पिछले इतिहास में आर्य समाज हिन्दी भाषा के प्रचारक, सहायक और संरक्षक के रूप में सामने आया।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का मानना था कि राष्ट्रभाषा या राजभाषा वही भाषा बन सकती जिसमें निम्नलिखित गुण हों-जिसे देश के अधिकांश निवासी समझते हों, वह सरल हो, वह क्षणिक या अस्थाई हितों को ध्यान में रखकर न चुनी गई हो, उसके द्वारा देश का परस्पर धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार सम्भव हो सके और सरकारी कर्मचारी उसे सरलता से सीख सके। गांधी जी का दृढ़ विश्वास था कि समस्त भारतीय भाषाओं में केवल हिन्दी ही ऐसी भाषा है जिसमें उपर्युक्त सभी गुण विद्यमान हैं।

हिन्दी दिवस के अवसर पर जहां विविध प्रकार के कार्यक्रम आयोजित हों, वहां शासकीय, शैक्षणिक, व्यापारिक क्षेत्रों में हिन्दी के अधिक प्रयोग के विषय में चर्चा अनिवार्य रूप से होनी चाहिए। तभी उस दिन की सार्थकता है। इन चर्चाओं के आधार पर अगले वर्ष के लिए ठोस एवं क्रमबद्ध कार्यक्रम भी बनाएं जाने चाहिए। आज हम हिन्दी दिवस के अवसर पर कार्यक्रम आयोजित करते हैं, वक्ता हिन्दी के महत्त्व पर प्रकाश ड़ालते हैं परन्तु व्यवहार में परिणाम शून्य है। लोग अपने घरों के बाहर नेमप्लेट अंग्रेजी में लगाते हैं, विवाह आदि कार्यक्रमों के निमन्त्रण पत्र अंग्रेजी में छपवाते हैं, अंग्रेजी बोलने में गौरव अनुभव करते हैं। हिन्दी भाषा का प्रचार तब तक सम्भव नहीं है जब तक हम अपने व्यवहार में हिन्दी को नहीं अपनाते। केवल साल में एक बार हिन्दी दिवस मना लेने से हिन्दी का प्रचार नहीं होगा। जिस स्वाधीनता संग्राम को भारतीय भाषाओं ने लड़ा, स्वाधीनता मिलते ही उन्हें दरकिनार कर दिया गया। स्वाधीनता के सारे दस्तावेज ही केवल अंग्रेजी में हस्ताक्षरित किए गए।

इस वर्ष हिन्दी दिवस के अवसर पर हम यह संकल्प करें कि अपने सभी कार्यों में हिन्दी को प्राथमिकता देंगे। स्वतन्त्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने बड़े भारी मन से यह कहा था कि कोई देश विदेशी भाषा द्वारा न तो उन्नति कर सकता है, न ही राष्ट्रभावना की अभिव्यक्ति कर सकता है। इसलिए हम राष्ट्र की उन्नति और अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए हिन्दी को अपनाएं। केवल हिन्दी दिवस मना लेने से हम कर्त्तव्य को पूर्ण नहीं कर सकते। जब से हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया गया है तभी से हम हिन्दी दिवस मनाते चले आ रहे हैं परन्तु क्या हिन्दी को वह सम्मान और स्थान प्राप्त है जो उसे राष्ट्रभाषा के रूप में मिलना चाहिए था। अगर हमें वास्तव में अपनी मातृभाषा, राष्ट्रभाषा हिन्दी से प्रेम है तो हमें उसके उत्थान के लिए रचनात्मक और ठोस कार्य करना होगा जिससे हम हिन्दी को उसका गौरव प्रदान कर सके।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

ईश्वर कोई व्यक्ति नहीं है, सर्व व्यापक चैतन्य स्वरूप शक्ति है

ले.-पं. उम्मेद सिंह विशारद

(ईश्वर)

महाभारत काल के बाद विश्व में एक मात्र महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ही ऐसे महापुरूष थे जिन्होंने संसार को ईश्वर का सत्य आभास कराया। उन्होंने बताया कि ईश्वर कोई व्यक्ति नहीं है अपितु सर्व व्यापक चैतन्य स्वरूप महाशक्ति है। ईश्वर सारे ब्रह्माण्ड में दृश्य और अदृश्य रूप में दिखाई देता है।

ईश्वर की सिद्धि में अनेक युक्तियां दी जाती है, जैसे सृष्टि में सर्जनात्मक चेतन शक्ति का होना, सृष्टि में क्रम तथा नियमबद्धता का होना, सृष्टि में प्रयोजन अथवा उद्देश्य का होना, सृष्टि की विविधता में एक सूत्रता का होना, सृष्टि में विशालता का होना, अस्थायित्व में स्थायित्व का होना, ये सब लक्षण जड़ जगत, वनस्पति जगत तथा प्राणी जगत में सर्वत्र पाये जाते है जिनके आधार पर निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि विश्वगत चेतन शक्ति की सत्ता माने बिना यह सब होना सम्भव नहीं है। जिस शक्ति के कारण सृष्टि में ये लक्षण पाये जाते है वही शक्ति ईश्वर है।

अदृष्य ही सत्य है

संसार के पदार्थों को दो भागों में बांटा जा सकता है-दृश्य तथा अदृश्य। दृश्य हमें दीखते है अदृश्य नहीं दीखते। न दीखने के कई कारण है कि वे इतने सूक्ष्म होते है उनको इन्द्रियां देख नहीं सकती। इसका परिणाम यह होता है कि हम दृश्य को ही सत्य समझते है। परन्तु वास्तविक दृष्टि से देखा जाए तो अदृश्य ही सत्य है। अदृश्य न हो तो दृश्य रह ही नहीं सकता। अन्तिम सत्य वृक्ष देखने में तो सत्य है किन्तु नाशवान है और बीज नाशवान नहीं है वही बीज सत्य हैं। ऐसे ही सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ विनाश को प्राप्त होते है किन्तु उनके अन्दर अदृश्य शक्ति जो सदैव सत्य रहती है कभी भी विनाश को प्राप्त नहीं होती है किन्तु उनके अन्दर अदृश्य शक्ति जो सदैव सत्य रहती है कभी भी विनाश को नहीं होती हैं।

सृष्टि में प्रयोजन या उद्देश्य

सृष्टि में प्रत्येक वस्तु का प्रयोजन है तथा किसी उद्देश्य हेतू उसका निर्माण हुआ है। प्रत्येक पदार्थ के प्रयोजन होने का उद्देश्य सिद्ध करता है कि उसके निर्माण के पीछे कोई चेतन शक्ति हैं और वही शक्ति वस्तु का निर्माण करती हैं। सृष्टि में सभी घटनाऐं या चक्र जो चल रहा है उसके सभी कार्य एक निश्चित प्रयोजन से बंधे हैं क्या इतना भारी निर्माण बिना रचनाकार के हो सकता है। बिना चेतन शक्ति के नहीं हो सकता है।

सृष्टि क्रम तथा नियम बद्धता

ईश्वर ने सृष्टि कर्म की रचना अदभुत की है और सूर्य चन्द्रमा तारे व सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को बिना किसी सहारे के अपनी शक्ति से चला रहा है व स्थिर किये हुए है। एक झलक देखिये।

सूर्य पृथ्वी से नौ करोड़ चालीस मील दूर है। चन्द्रमा पृथ्वी से दो लाख चालीस हजार मील दूर है। और निरन्तर बिना सहारे के अपनी धुरी पर घूमते रहते हैं आश्चर्य है इनकी दूरी घटती बढ़ती नहीं हैं चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा 17 दिन 7 घन्टे 56 मिनट 12 सैकिन्ड में पूरी करता है। पृथ्वी अपनी धुरी पर 23 घन्टे 56 मिनट 9 सेकिन्ड में घूमती है। और पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा एक सेकिन्ड में 18 मील की दूरी तय करती है। इसी प्रकार ब्रह्मांड में बड़े-बड़े तारे है। संसार का प्रत्येक परमाणु एक निर्धारित नियम से कार्य कर रहा है यदि उनमें जरा भी व्यावधान हो जाए तो विराट ब्रह्मांड का अस्तित्व एक क्षण में समाप्त हो जाये और एक कण के विस्फोट से अनन्त प्रकृति में आग लग सकती हैं। यह सम्पूर्ण व्यवस्था ईश्वर ने की हुई है उसकी के कारण सब क्रियावान है।

सृष्टि में सर्जानात्मक चेतन शक्ति

ईश्वर की व्यवस्था से सृष्टि में प्रत्येक पदार्थ का विकास व विनाश निश्चित हो रहा है। जड़ की हर गति कालान्तर में समाप्त हो जाती है। इस गति को देने वाली कोई शक्ति है। इस गति को देने वाली कोई चेतन शक्ति होनी चाहिए। वह जड़ नहीं हो सकती, उस रचना या सर्जन करने वाली शक्ति का नाम ही ईश्वर है।

प्राणी जगत में सजर्नात्मक चेतन शक्ति

यह चेतन शक्ति ईश्वर द्वारा प्राणी जगत में उदबुद्ध हो रही हैं। प्राणी में वैयक्तिक चेतना तथा विश्व चेतना दोनों मौजूद है। इनमें वैयक्तिक चेतना आत्मा कहलाती है। विश्व चेतना परमात्मा कहलाती हैं। परमात्मा जड़ चेतन सब में मौजूद रहता है। आत्मा वह है। जो कर्म कर्त्ता फल भोगता है, चेतना वह है जो न कर्म करती है न फल भोगती हैं क्योंकि विकास बिना चेतन शक्ति के नहीं हो सकता वह चेतन शक्ति ही ईश्वर है।

वनस्पति तथा वृक्ष जगत में क्रम तथा नियम बद्धता

वनस्पतियों तथा वृक्षों की वृद्धि के भी नियम हैं बीज से अंकुर व अंकुर से फूल, फल फिर उसमें बीज उसी चक्कर में चल देता है। ये नियम टूटता नहीं हैं। इस विकास को चेतन शक्ति चला रही है, इसलिए यह ईश्वर की शक्ति है।

जड़ जगत में सर्जनात्मक चेतन शक्ति

अन्तरिक्ष में अनगिनत तारे है। जैसे हमारे सौर-मण्डल में गति है, वैसे उनमें भी गति है ताकि विकास की प्रतिक्रिया चल रही है, ये सब तारे सौरमण्डल में तीव्र गति से दौड़ रहे हैं एक दूसरे से लाखों मील दूर होते हुए भी करोड़ों वर्षों से ये गतिशील है कोई एक दूसरे से टकराते नहीं हैं ये सब अग्नि के पुंज हैं पृथ्वी भी किसी समय इसी प्रकार अग्निमय थी। जड़ जगत की इतनी गति इतना विकास चेतन शक्ति के बिना नहीं हो सकता। एक छोटा सा तिनका भी चेतन शक्ति के बिना नहीं हिल सकता। जैसे हवा को कौन चला रहा है, अर्थात जड़ जगत का प्रत्येक पदार्थ चेतन शक्ति से गतिशील है, जो जड़ में गति दे रहा है वही ईश्वर है।

ईश्वर को व्यक्ति समझने की अज्ञानता सोचिये और समझिये

अधिकांश मतों व कथित धर्मों में ईश्वर को महामानव ही माना गया हैं स्वर्ग नरक की कल्पना भी ईश्वर को मनुष्य मानने के कारण है। ईश्वर मनुष्य जैसा होगा तो किसी विशेष स्थान में रहता होना चाहिए और वह स्तुति करने से खुश और गाली देने से नाराज होता होगा। यदि वह स्थान विशेष पर रहेगा तो सर्वव्यापी नहीं होगा। उसकी जन्म और मृत्यू भी होगी, इसलिए ईश्वर व्यक्ति विशेष नहीं शक्ति विशेष है। ईश्वर अजन्मा सर्व शक्तिमान है।

ईश्वर के कार्य मनुष्य रूपी मान्य भगवान नहीं कर सकता है

संसार की मान्यताओं को देख आश्चर्य होता है कि अधिक पढ़ा लिखा व ऊंचे पदों पर बैठा व्यक्ति भी जड़ और चेतन्न, व ईश्वर और अल्प शक्ति वाला मनुष्य में अपने पूर्व दूराग्रहों की मान्यताओं के कारण भेद नहीं कर पा रहा है। देखिये एक सत्य। ईश्वर सारे ब्रह्माण्ड का रचयिता है और मनुष्य रूपी मान्य भगवान ईश्वर की रचना में रहता है। 2-ईश्वर सारे जीवों को पालन हेतू भोग सामग्री देता है, और मनुष्य रूपी भगवान उसके सामर्थ्य में जीवन जीता है। 3-ईश्वर कर्म फल देता है और मनुष्य रूपी भगवान कर्म करके ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था में रहता है। 4-ईश्वर सृष्टि की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय करता है और मनुष्य रूपी भगवान ईश्वर की व्यवस्था में रहता है। 5-ईश्वर अजन्मा और अविनाशी है और मनुष्य रूपी भगवान जन्मा व एक देशी नाशवान है। 6-ईश्वर सृष्टि क्रम द्वारा ॠतुऐं व अन्य वनस्पति देता है और मनुष्य रूपी भगवान ईश्वर की व्यवस्था में जीता और मरता हैं 7-ईश्वर निराकार व सर्वव्यापक है और मनुष्य रूपी भगवान एक देशीय, अल्पशक्ति वाला व आकार वाला होता है। सोचिये विचारिये।

ईश्वर का अवतार वाद कल्पना पर आधारित है

जन साधारण का विचार है ईश्वर स्वयं अवतार धारण करके पृथ्वी पर जन्म लेते है। यह मान्यता महा अज्ञान है। क्योंकि ईश्वर अजन्मा, अव्यय, निराकार, सृष्टिकर्ता है। वह साकार कैसे हो सकता है। यह अलग बात है, मोक्ष से लौट कर मुक्त आत्याऐं सृष्टि के मानवों में सन्तुलन बनाने के लिये अधर्म का नाश करने के लिए जन्म लेती है। संसार में मानवों का जन्म दो प्रकार का होता है, एक कर्म बद्ध जीवन, दूसरा कर्म बन्धन मुक्त जीवन, जैसे श्री कृष्ण कर्मबन्ध मुक्त जीव है और अर्जुन कर्म बद्ध जीवन। कर्म मुक्त जीव अधर्म का नाश करने के लिये जन्म लेते है। अन्तर यह है दोनों में कर्म मुक्त जीवन स्वेच्छा से और क्रमबन्ध कर्मफल भोग हेतु जनमते है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने कहा था वेदों की लौटो

वेद सृष्टि का संविधान ग्रन्थ है, जिस प्रकार ईश्वर ने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में प्रत्येक पदार्थ प्राणी मात्र के लिये बनाऐं है, उसी प्रकार संसार में आध्यात्मिक सामाजिक व्यवहारिक सन्तुलन सत्यता बनाने हेतु वेदों की शिक्षाऐं भी प्रदान की है। क्योंकि वेद विज्ञान समस्त है, वेदों में किसी भी प्रकार का धार्मिक व सामाजिक अन्धविश्वास नहीं है। वेद सार्वभौम सर्वकालिक हैं वेद की शिक्षाओं से मानव समाज में आपसी स्नेह परस्पर विरोध रहित चाल चलन एक ईश्वर पूजा, एक धर्म, एक संस्कार, एक सभ्यता, एक संस्कृति बनी रहती है। आर्य समाज ने पूर्ण रूप से वेदों की शिक्षाओं पर चल व चला रहा है। इसलिए आर्य समाज राष्ट्र को सर्वोपरि मानता है। **आर्य समाज मानता है कि ईश्वर कोई व्यक्ति नहीं है, सर्वव्यापक चेतन शक्ति है।**

प्राणी जगत् में सर्वोत्तम मनुष्य

ले.-आचार्य देवेन्द्र प्रसाद शास्त्री ''सुवित्रेय'' आर्य समाज मंदिर स्वामी श्रद्धानंद पथ, रांची

गतांक से आगे

वयसि गते क: कामविकार: शुष्के नीरे क: कासार:।

क्षीणे वित्ते क: परिवारो ज्ञाते तत्वे क: संसार:।।7।। भज गोविन्दं...

अग्रे वहिन: पृष्ठे भानु: रात्रौ चिबुक समर्पित जानु:।

करतल भिक्षा तरूतलवासस्तदपि न मुच्चत्याशा पाश:।।8।। भज गोविन्दं...

यावद्वितोपार्जनशक्तस्तावन्निज परिवारे रक्त:।

पश्चार्ज्जरभूते देहे वार्त्तां कोऽपि न पृच्छति गेहे।।9।। भज गोविन्दं...

रथ्याकर्पट विरचित कन्य: पुण्याऽपुण्य विवर्जित पन्था:।

न त्वं नाहं नाऽयं लोकस्तदपि किमर्थं क्रियते शोक:।।10।। भज गोविन्दं...

कोऽहं कस्त्वं कुत आयात: का मे जननी को मे तात:।

इति परिभावय सर्वमसारं सर्वं त्यक्त्वा स्वप्नविचारं।।11।। भज गोविन्दं...

का ते कान्ता कस्ते पुत्र: आयातस्तत्वं चिन्तयं मनसि भ्रात:।।12।।'' भाज गोविन्दं...

उपरिलिखित संस्कृत श्लोकों के भाव हैं: ''बारम्बार जन्म-धारण करने की प्रवृत्ति वाले नश्वर शरीर में जब प्रभु के प्रति प्रेम और भक्ति का उदय हो जाता है, तब व्यक्ति इस अथाह संसार-सागर से उसकी कृपा पाकर तर जाता है।''

यहाँ विचारणीय बिन्दु यह है कि मानव का सूक्ष्म शरीर प्रभुभक्ति और उसकी प्राप्ति अथवा संसार में स्थूल शरीर से किस प्रकार की भूमिका निभाता है। जब कोई व्यक्ति अच्छा या खराब संकल्प करके स्थूल शरीर से काम करने के लिए तैयार होता है तब उसी समय उसे सूक्ष्म शरीर के माध्यम से परमात्मा की आवाज सुनाई देती है। इसी आवाज को बोल-चाल की भाषा में ''जमीर की आवाज'' कहते हैं। यदि इसे कोई सुन ले और तद्वत् कार्य करने लगे तब वह संसार में धन्य-धन्य हो जाता है। इसे सुनकर यदि जघन्य पापी भी तदनुसार कार्य करने में उद्यत हो जाये तो सिर्फ वही स्वयं पतित पावन नहीं बनेगा, बल्कि उसके संसर्ग में आने वाले सभी सांसारिक लोग भी पवित्र हो जायेंगे। अंग्रेजी में प्रचलित कहावत है-''Every saint has past, Every sinner has fulture." अर्थात् प्रत्येक महानात्मा का अतीत होता है और प्रत्येक पापियों का भविष्य होता है। इस कहावत को लोग आज इस लिये झुठला दिये, क्योंकि कुछ महानात्मायें इस के अपवाद भी हो गये हैं।

तीसरा कारण शरीर है, जिसमें सुषुप्ति अर्थात् प्रगाढ़ निद्रा होती है। यह प्रकृति रूप है। यह शरीर प्रकृतिरूप होने से सर्वत्र विभु और सभी जीवों के लिए एक है। इसमें किसी प्रकार का अन्तर नहीं है।

सभी योनियों के प्राणियों के शरीरों से मानव शरीर की महत्ता इसलिए अधिक है, क्योंकि (यह मानव) शरीर ही परमात्मा से मिलने का साधन है। संत तुलसी का कथन है:-''नर तन सम नहिं कवनेउदेहि। जीव चराचर ज्ञावत तेहि।।'' इसी शरीर को देवपुरी, देवालय, अयोध्या, दैवी, नाव, दैवी, वीणा, ब्रह्मपुरी आदि नामों से भारतीय धर्मग्रन्थों में कहा गया है। इस मन्दिर रूपी महादुर्ग में नौ दरवाजे (दो नेत्र, दो नासिकायें, दो कान, एक मुख एक मलद्वार और एक मूत्र त्यागने का द्वार और आठ चक्र (Plexus) (1. मूलाधार चक्र, 2. स्वाधिष्ठान चक्र, 3. मणिपूरक चक्र 4. अनाहत चक्र, 5. हृदय चक्र 6. विशुद्ध चक्र, 7. आज्ञा चक्र, 8. ब्रह्माचक्र या सहस्त्रार चक्र: हठयोगानुसार) हैं। जिन्हें जीतना, फतह करना, अपने वश में करके विजय प्राप्त करना मनुष्य के लिए संसार में दुष्कर कार्य माना गया है। इन चक्रों में ज्योति से भरपूर शक्तियों के कोष स्थित हैं। तैंतीस देवता और ब्रह्म प्रतिष्ठित है। मानवीय शरीर में स्थित इन आठ चक्रों पर प्रकाश डालते हुए अथर्ववेद (10/2/31,32,33) में कहा गया है।

''अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या। तस्यां हिरण्यमय: कोश: स्वर्गोज्योतिषावृत:।। तस्मिन् हिरण्यये कोशत्र्यरे त्रिप्रतिष्ठिते।

तस्मिन् यद् यक्षमात्मवन्त् तद वै ब्रह्मविदो विदु:।।

प्रभ्राजमानां हरिणीं यशसा संपरिवृत्ताम्। पुरं हिरण्ययी ब्रह्मा विवेशापराजितम्।।''

तुलसीदास की ''रामचरित मानस'' में भी उद्घोषणा है:-''मानव शरीर पर विजय प्राप्त करना संसार में अजेय शत्रु से भी दुष्कर कार्य है।'' यथा-''महा अजय संसार रिपु: जिति सकहिं सो वीर। जाके अस रथ रोंहि दृढ़ सुनहु सखा मतीधीर।।''

उपरोक्त पंक्तियों में संत तुलसी ने 'रथ' शब्द मानव देह के लिए ही प्रयुक्त किया है। स्वशरीर जेता जगत्पति को पाता है और हारा हुआ व्यक्ति माया के अधीन हो जाता है। आठ चक्रों को ही ग्रन्थि चक्र और लोक भी कहते हैं। मानव के सम्पूर्ण शरीर में जहाँ असंख्य तन्तुओं के जाल फैले हुए हैं, वहीं अनगिनत नाड़ी श्रृंखलाओं के गुच्छक भी फैले हुए हैं। ये नाड़ी गुच्छक श्रृंखलायें दायें और बायें दो विभागों में बँट गए हैं। बायीं ओर वाली नाड़ी श्रृंखला को ईंगला और दाहिनी ओर वाली को पिंगला कहते हैं। इन्हें ही सूर्य और चन्द्र नाड़ी के नाम से भी जाना जाता है। रीढ़ के बीच में सुषुम्ना नाड़ी होती है। चन्द्र नाड़ी जब शरीर में प्रवाहित होती है तब शीतलता का संचार होता है। और जब शरीर में सूर्य नाड़ी संचारित होती है, तब ऊष्मा प्रवाहित होती है। उपरोक्त तीनों नाड़ियों को गंगा, जमुना और सरस्वती नाम से भी धर्म-ग्रन्थों में यत्र-तत्र सम्बोधित किया गया है। शरीर के कई स्थानों पर ये नाड़ी और तन्तु एकत्रित होकर मिल जाते हैं, जिन्हें विज्ञान की भाषा में नाड़ी-ग्रंन्थि चक्र (Plexus) कहते हैं।

ये नाड़ी-गुच्छक, गुच्छक गुद्दी की ढेरी है जिसमें नाड़ी घटक भी सम्मिलित हैं (A ganglion is a mass of nervous matter including nerve cells) वेदवेत्ता, शास्त्र-प्रणेता और योगियों ने नाड़ी ग्रन्थि चक्रों को सिर्फ चक्र या लोक कह कर पुकारते आ रहे हैं।

आत्म-कल्याणार्थी और मुमुक्षु श्रद्धालु जन-परमात्म-दर्शन का लाभ पाने के लिए गंगा, यमुना और सरस्वती रूपी इन के संगम में ध्यान द्वारा स्नान कर शरीर रूपी इस महादुर्ग में श्रद्धालु मुमुक्षु जन प्रवेश करते हैं। इन चक्रों में प्राणायाम के माध्यम से जागृति पैदा करके शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों को सद्गुरू के सान्निध्य में रह कर उनके निर्देशानुसार क्रियाशील बनाते हैं। हठयोग में जिसे चक्र-भेदन प्रक्रिया कहते हैं। जब संसार का कोई भी व्यक्ति इन चक्रों को क्रियाशील कर लेता है, तब उसमें कुछ विशेष गुण आने लग जाते हैं। जैसे मूलाधार चक्र के भेदन या उत्तेजन से तेज स्थिर होकर व्यक्ति ऊर्ध्वरेता बन जाता है। यह चक्र गुदा और जननेन्द्रिय के बीच में स्थित है।

इसी प्रकार सात अन्य चक्रों के भी स्थान और कार्य निर्धारित हैं। यथा स्वाधिष्ठान चक्र पेड़ में है। इसमें उत्तेजना होने से प्रेम और अहिंसा के भाव मनुष्य में जागते हैं। शरीर रोग से रहित हो जाता है। थकावट मिट कर स्वास्थ्य लाभ होता है। मणिपूरक चक्र में नाभि है। इसके उत्तेजित होने पर शारीरिक एवं मानसिक दु:ख कम होते हैं। मन स्थिरता को प्राप्त करता है। अनाहत चक्र हृदय में है। हृदय के समस्त व्यापार चक्र से नियंत्रित होते हैं। विशुद्ध चक्र कण्ठ में हैं। इसमें संयम करने से बाह्य जगत की विस्मृति और आन्तरिक कार्य शुरू होते हैं। तारूण्य और उत्साह प्राप्त होते हैं। आज्ञाचक्र दोनों भौओं के मध्य ललात में स्थित है। इसलिए इसे गुहाभ्रमर ललाट चक्र भी कहते हैं। इस चक्र पर नियंत्रण करने से शरीर पर प्रभुत्व प्राप्त होकर नाड़ियों की स्वाधीनता प्राप्त हो जाती है। तार्किक शक्ति, मनन-शक्ति और मस्तिष्क का विकास होता है। भूत, भविष्य और वर्त्तमान का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इसीलिए इसे 'दिव्यचक्षु' और 'तृतीय नेत्र' भी कहते हैं। सहस्त्रार या ब्रह्मचक्र तालु स्थान के ऊपर है। यह समस्त शक्तियों का कन्द्र है।

इस पर काबू (अधिकार) करने से अपने शरीर के समस्त शक्तियों के केन्द्रों का मालिक हो जाता है। योग के ऐश्वर्यों की प्राप्ति होने लग जाती है। यदि व्यक्ति शिव-संकल्पी और अहिंसक प्रवृत्ति का हो जाय, तब उसे ईश्वरीय वरदान के रूप में ब्रह्मवर्चस शक्ति की प्राप्ति होने लग जाती है। आदि-आदि...।

इन चक्रों से समय-समय पर रासायनिक दूत (हारमोन्स) नि:सृत होते रहते हैं, जिससे व्यक्तियों के सम्पूर्ण जीवन और क्रियाकलाप प्रभावित एवं संचालित होते रहते है। शरीर के इन चक्रों और कुछ अंगों में दिव्यशक्तियों के निवास होते हैं। फलत: सुकर्मी और दुष्कर्मी पुरस्कृत तथा दंडित भी स्वत: होते रहते हैं। जैसे-पाँच प्राण और पंच महाप्राण को लें। मानव शरीर में इन प्राणों के निवास तथा कर्म निर्धारित हैं। यथा प्राण वायु हृदय में रहता है। गति एवं जीवन इसी प्राण से संचालित होते हैं। रक्त की शुद्धिकरण तथा श्वास-प्रश्वास इसी प्राण से संचालित हो रहा है। जो श्वास बाहर जाता है, वही प्राण (Expire Air) है। **(क्रमश:)**

महर्षि देव दयानन्द के जीवन की कुछ विविध घटनाएँ

ले.-पं. खुशहाल चन्द्र आर्य C/o गोबिन्द राय आर्य एण्ड सन्ज़ १८० महात्मा गान्धी रोड़, (दो तल्ला) कोलकत्ता-700007

महर्षि देवदयानन्द का जीवन विविध घटनाओं से भरा पड़ा है। जिनमें कुछ घटनाएँ इस लेख में प्रस्तुत करते हैं। वे इसी भांति है।

१. ब्रह्मचर्य का अद्‌भुत बल-यह सन् 1877 की जालन्धर की घटना है। एक दिन सं. विक्रम सिंह ने स्वामी जी के समक्ष अपनी शंका व्यक्त की और बोले ''भगवान्! ऐसा कहा जाता है कि ब्रह्मचर्य से व्यक्ति महाबली हो जाता है। क्या यह कथन सत्य है?'' स्वामी जी ने उत्तर दिया कि ''शास्त्रों ने ब्रह्मचर्य की जो महिमा बखानी है, वह सर्वथा सत्य है।'' इस पर सरदार जी बोले ''आप भी तो ब्रह्मचारी हैं, हमें तो आप में कोई बल दिखाई नहीं देता।'' स्वामी जी ने उनकी इस बात का कोई उत्तर न दिया।

सरदार जी जब सत्संग की समाप्ति पर अपनी दो घोड़ों की गाड़ी में आरूढ़ हुए तो स्वामी जी ने उसे पीछे से पकड़ लिया। विक्रम सिंह बार-बार घोड़ों को चाबुक लगाते रहे, किन्तु घोड़े केवल हिनहिनाते रहे, परन्तु आगे नहीं बढ़े। तब सरदार जी ने अपनी दृष्टि पीछे घुमाई तो देखा कि स्वामी जी गाड़ी को पकड़े खड़े हैं। स्वामी जी ने गाड़ी को छोड़ दिया तो वह आगे बढ़ी। इस प्रकार सरकार विक्रम सिंह पर स्वामी जी के ब्रह्मचर्य बल की अमिट छाट पड़ गई।

अमीचन्द का जीवन बदला-यह 26 दिसतम्बर 1877 की घटना जेहलम (पंजाब) की है। एक दिन एक व्यक्ति ने पूछा ''महाराज! अनुमति हो तो आज मैं एक गीत सुनाऊँ?'' स्वीकृति प्राप्त होते ही उसके सुमधुर कण्ठ से गीत फूट उठा। उसकी वाणी में इतना माधुर्य था कि स्वामी जी झूम उठे। सत्संग की समाप्ति पर एक व्यक्ति ने स्वामी जी को बताया कि ''महाराज! जिस व्यक्ति ने आज गीत गाया है, वह यहाँ का तहसील दार है और इसका नाम अमीचन्द है।'' यह चरित्रहीन है और अपनी धर्म पत्नी को त्यागकर वेश्यागामी हो गया है। माँस और मद्य का भी सेवन करता है।

अगले दिन उसने स्वामी जी की स्वीकृति से पुनः एक गीत गाया। श्रोता व स्वामी जी सभी उसकी संगीत लहरी से आनन्दित हो उठे। गायन समाप्त हुआ तो स्वामी जी बोले ''अमीचन्द! तुम हो तो हीरे, किन्तु कीचड़ में पड़े हो।'' स्वामी जी के इन शब्दों ने उसे विद्युत आघात सा महसूस हुआ और वह यह कहते उठकर चल दिया।'' महाराज, अब मैं पाप पंक से निकलकर ही आपके दर्शन करूँगा।'' घर जाकर अमीचन्द ने शराब की सभी बोलतें तोड़ दी और वेश्याओं को भी स्वगृह से निष्कासित कर दिया। माँस से भी विरक्तिधारण कर ली और तार देकर अपनी पत्नी को वापस बुला लिया। अमीचन्द के इस जीवन परिवर्तन से जहाँ सारा नगर आश्चर्यचकित रह गया, वहाँ स्वामी जी का प्रभाव भी जन-जन में व्याप्त हो गया। यही अमीचन्द बाद में मेहता अमीचन्द के नाम से विख्यात हुए। इन्होंने अनेक भजन लिखे। इनका एक भजन ''आज सब मिल गीत गाओ, उस प्रभु को धन्यवाद।'' आज भी आर्य समाजों में बड़े प्रेम एवं श्रद्धा भक्ति से गाया जाता है।

3. तो फिर उड़ा दो-9 मई 1876 को स्वामी जी फर्रूखाबाद पधारे। यहाँ ईसाई पादरी जे-जे लूक्स के साथ स्वामी जी की धर्म चर्चा हुई, फिर उसने प्रश्न किया ''स्वामी जी यदि आपको तोप के मुँह से बाँध कर कहा जाए कि यदि आप मूर्त्ति के समक्ष नतमस्तक न होंगे तो आपको तोप से उड़ा दिया जायेगा, तो आपका उत्तर क्या होगा?'' स्वामी जी ने प्रबल आत्म विश्वास का परिचय दिया और बोले उस समय मेरे मुंह से यही निकलेगा ''तो फिर उड़ा दो।''

४. जहाँ भी रहूँगा, सत्य ही कहूँगा-मार्च 1878 में स्वामी जी लाहौर पहुँचे, वहाँ उनका निकास नबाब वाजिदअली की कोठी में हुआ। यहीं स्वामी जी के व्याख्यान भी होते थे। एक दिन आपने इस्लाम की आलोचना की तो व्याख्यान के उपरान्त एक सज्जन ने आपके इस प्रवचन की यह कहते हुए आलोचना की कि ''स्वामी जी आप एक मुसलमान के घर पर ही ठहर कर उसी के मज़हब की आलोचना तो न करिए।''

महर्षि दयानन्द ने उत्तर दिया, ''मैं वैदिक धर्म के प्रचारार्थ आया हूँ। उसी का उपदेश दूँगा। मेरे यहाँ आने का प्रयोजन इस्लाम अथवा किसी अन्य मजहब की यशोगाथा गाना नहीं है। मैं तो जहाँ भी रहूँगा, सत्य ही कहूँगा। मुझे परमात्मा के अतिरिक्त और किसी का भी भय नहीं है।

५. उपदेशामृत का प्रभाव-यह घटना जनवरी 1879 की ज्वालापुर की है। यहाँ से सुप्रसिद्ध मुस्लिम रईस ऐवाज खाँ भी स्वामी जी के उपदेशामृत का नितान्त मनोयोग सहित पान करते थे। अन्ततः श्री एवाज खाँ के जीवन में एक नवीन परिवर्तन आया और वे भी गोरक्षा के प्रबल समर्थक हो गए, तथा उन्होंने नित्य स्नान को भी अपना नियम बना लिया। इतना ही नहीं, माँसाहार से भी उन्हें पूर्ण विरक्ति हो गई। स्वामी जी ने उक्त मुस्लिम रईस को अपने प्रबल तर्कों द्वारा आर्य सिद्धान्तों के प्रति अनुरक्त बना दिया था और उसकी जीवनधारा को एक नया मोड़ दे दिया था।

६. सत्संग में नींद आने का रहस्य-17 अप्रैल 1878 को स्वामी जी लाहौर में पुनः पहुँचने पर उनके उपदेशामृत से लोग अपना जीवन सफल करने लगे। एक दिन एक श्रद्धालु सज्जन ने स्वामी जी से प्रश्न किया, ''महाराज! नृत्य, संगीत और हास्य-परिहास्य के स्थलों पर तो लोग सारी-सारी रात जागते रहते हैं, किन्तु सत्संग और धर्मोपदेश में लोग कुछ ही समय के उपरान्त ऊँघने क्यों लग जाते हैं?''

महर्षि ने उसका समाधान इन शब्दों में किया, ''जिस स्थान पर प्रभु की महिमा का वर्णन हो, वह सत्संग स्थल तो सुकोमल शैया के तुल्य है, जब कि नृत्य, संगीत आदि उत्तेजक भाव आत्मा के लिए काँटों का बिछौना है। अतः यह स्वाभाविक ही है कि सत्संग स्थल रूपी सुकोमल शैया पर किसी को भी निद्रा आ जावे। काँटों के बिछौने पर भला कोई कैसे सो सकता है।

६. देवालय तोड़ ना मेरा काम नहीं-25 सितम्बर से 8 अक्टूबर तक स्वामी जी ने फर्रूखाबाद में वेदसुधा सरसाई। उन्हीं दिनों फर्रूखाबाद की सड़कों का सर्वेक्षण चल रहा था। बाजार में सड़क पर एक छोटी सी मढ़िया थी। अनेक लोग वहाँ धूप-दीप जलाते थे। एक दिन बाबू मनमोहन लाल स्वामी जी के पास आये और बोले, ''महाराज! स्काट साहब आपको बहुत मानते हैं। यदि आप उन्हें इशारा कर दें तो मार्ग में स्थित मढ़िया, मार्ग से हट सकती है। भ्रम का स्थान दूर हो सकता है।

स्वामी जी ने उत्तर में कहा ''लिखों और टेढ़े मार्ग से किसी मत को हानि पहुँचाना धर्म नहीं अधर्म है। मुस्लिम शासकों ने सैकड़ों मन्दिरों का विध्वंस किया, किन्तु वे मूर्त्ति-पूजा बन्द न करा सके। हमारा काम तो मानव हृदय से मूर्तियों को निकालना है, ईंट-पत्थर के बने देवालयों को तोड़ना-फोड़ना नहीं।

इन सात घटनाओं से यह ज्ञात हो गया कि स्वामी जी कितने सत्य के उपासक थे और कितने उदार हृदय के थे। उनका वैदिक धर्म, मानव धर्म था इसीलिए वे इस धर्म का प्रचार व प्रसार करते थे।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

आर्य समाज जीरा में रक्षा बंधन व 15 अगस्त पर्व मनाया गया

आज दिनांक 15-08-19 को आर्य समाज जीरा में रक्षाबंधन व 15 अगस्त का पर्व बड़ी ही धूमधाम से मनाया गया। जिसमें सर्वप्रथम प्रात: 8.30 बजे इस समाज के पुरोहित श्री किशोर कुणाल जी ने हवन-यज्ञ करवाया। उसके बाद इन दोनों पर्वों पर अपना व्याख्यान देते हुए बताया कि रक्षाबंधन केवल बहन द्वारा भाई का रक्षा करने का व्रत करवाना ही नहीं है, अपितु हर किसी को जरूरत पड़ने पर एक दूसरे की रक्षा करने का संकल्प लेना है। तथा 15 अगस्त राष्ट्रहित जीवन को न्योछावर करने हेतु हर समय कटिबद्ध रहने का प्रतिज्ञा करने का दिन ही नहीं वरन सुअवसर तथा सुदिन है जिसे जीवन पर्यन्त निर्वहन करना है। उस दिन पुरोहित जी के सुपुत्र श्री सुबोध कुमार तथा पुत्रवधू श्रीमती लालसा कुमारी ने मुख्य यजमान पद को सुशोभित किया। अन्त में इस समाज के प्रधान श्री सुभाषचन्द्र आर्य तथा पुरोहित श्री किशोर कुणाल जी ने आए हुए आर्य भाई-बहनों तथा बच्चों को विशेष रूप से आशीर्वाद दिया। इसके बाद शांतिपाठ के साथ इस आयोजन को समाप्त किया तथा प्रसाद वितरण किया गया।

पुरोहित आर्य समाज जीरा

आर्य समाज जीरा में श्री कृष्ण जन्माष्टमी पर्व श्रद्धा व उल्लास के साथ मनाया गया

आज दिनांक 24-08-19 को जन्माष्टमी पर्व का आयोजन आर्य समाज जीरा में सप्रेम तथा श्रद्धा के साथ किया गया, जिसमें सबसे पहले प्रात: 8.30 बजे इस समाज के पुरोहित श्री किशोर कुणाल जी ने बड़ी ही निष्ठा व प्रतिष्ठा के साथ हवन-यज्ञ करवाया। तदोपरान्त श्री कृष्ण भगवान के पावन जीवन पर प्रकाश डालते हुए बताया कि कृष्ण के जीवन से हमें यह शिक्षा लेनी चाहिए कि हम भी न्याय के रास्ते पर चलते हुए कमज़ोर लोगों को मदद करने के लिए सदैव तैयार रहें। दुष्ट जनों को साथ नहीं अपितु विनाश करके लोगों को सुख-शांति दिलानी चाहिए। यही हमारा ध्येय और धर्म होना चाहिए।

अन्त में इस समाज के प्रधान श्री सुभा चन्द्र आर्य तथा पुरोहित श्री किशोर कुणाल जी ने आर्य सज्जनों को शुभ कामनाएँ व्यक्त की।

इसके बाद शांतिपाठ और प्रसाद वितरण किया गया।

पुरोहित आर्य समाज जीरा

श्रीकृष्णजन्माष्टमी का पर्व मनाया गया

आर्य समाज मन्दिर फरीदकोट में 24 अगस्त 2019 को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पर्व बड़ी श्रद्धा और धूमधाम के साथ मनाया गया। इस पर्व पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के भजनोपदेशक श्री अरूण वेदालंकार जी के मधुर भजन हुए। प्रात:काल यज्ञ का आयोजन किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा आर्य समाज के पुरोहित श्री कमलेश शास्त्री जी थे। सभी यजमानों ने बड़ी श्रद्धा के साथ यज्ञ में आहुतियाँ प्रदान की। पं. कमलेश शास्त्री जी ने बताया कि पर्व हमारे जीवन का अटूट हिस्सा है। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पर्व हमें महान् योगीराज श्रीकृष्ण जी की याद दिलाता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थ प्रकाश में श्रीकृष्ण को आप्त पुरूष कहा है , जिसने जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त कोई भी बुरा कार्य नहीं किया। इन्हीं महापुरूषों के कारण आज हमारी संस्कृति जीवित है। इसके पश्चात भजनोपदेशक श्री अरूण वेदालंकार जी ने अपने भजनों के द्वारा श्रोताओं को आनन्दित किया और महर्षि दयानन्द के संदेश को घर-घर तक पहुँचाया। इस अवसर पर आर्य समाज के प्रधान श्री कपिल सहूजा, श्री प्रमोद गोयल, श्री नरेश देवगन, श्री मदनमोहन देवगन, श्री रवि वर्मा, श्री जगदीश वर्मा, श्री आशीष गोयल, श्री बलदेव वाटस एडवोकेट, प्रो. निर्मल कौशिक, श्री राजीव वर्मा, श्री अनिल भटनागर, एवं महिला आर्य समाज की सभी माताएं उपस्थित हुई। अन्त में मन्त्री श्री सतीश शर्मा जी ने सभी आर्यजनों को श्रीकृष्णजन्माष्टमी की शुभकामनाएं दी व सभी का धन्यवाद किया। इस प्रकार यह पर्व धूमधाम से मनाया गया।

सतीश शर्मा, मन्त्री आर्य समाज फरीदकोट

दयानन्द मठ चम्बा के 39वें वार्षिक यज्ञ का तथा 19वें दुर्लभ शारद यज्ञ का सादर आमन्त्रण

धर्मप्रेमी सज्जनों। दयानन्द मठ चम्बा के संस्थापक संत शिरोमणि पूज्य स्वामी सर्वानंद जी महाराज के सुयोग्य शिष्य, दयानन्द मठ चम्बा के विस्तारक, संस्था को पौधे से विशाल वट वृक्ष का आकार प्रदान करने वाले त्यागी, तपस्वी, दृढ़व्रति, धुन के धनी, कर्मयोगी पूज्य स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज की तपस्थलि, देवभूमि चम्बा की धरा पर पवित्र रावी नदी के किनारे पर स्थित दयानंद मठ चम्बा अपने 39वें वार्षिकोत्सव को यज्ञ तथा सत्संग के माध्यम से 26, 27 तथा 28 सितम्बर 2019 को हर्षोल्लासपूर्वक मनाने जा रहा है। साथ ही 29, 30 सितम्बर को ऋग्वेद में महिमा मंडित संस्था के विस्तारक पूज्य चरणों के ही अनथक प्रयास से वर्तमान में चम्बा की पुण्य धरा पर ही सुलभ, पूज्य चरणों का प्रियतम दुर्लभ शारद यज्ञ 2000 से हर वर्षों की भान्ति इस वर्ष भी पूरी श्रद्धा से, निष्ठापूर्वक उत्साह व उमंगों में भरकर किया जा रहा है। महान त्यागी, तपस्वी, यज्ञ के लिए समर्पित देश-विदेश में वैदिक संस्कृति की शान्तिदायिनी, शीतलता की बयार बहाने में अनथक प्रयास करने वाले, देश जाति व समाज में छाई अज्ञानांधकार को वेद ज्ञान के प्रकाश से दूर करने के लिए अपने जीवन की, अपने स्वास्थ्य की भी परवाह न कर रात-दिन एक करने वाले दो निस्वार्थी, निर्लोभी, यज्ञोमयी जीवन वाले सन्तों की छत्रछाया में यह सारा का सारा कार्यक्रम चलेगा। नीचे से, प्रत्यक्ष रूप से इन सन्तों की छत्रछाया होगी। ऊपर से परमपिता परमात्मा के साथ-साथ पूज्य चरणों की, दिव्यात्माओं, दिव्यजनों, देवों, पितरों की छाया में तथा उनके ही मजबूत सुरक्षा कवच से सुरक्षित यह कार्यक्रम भव्य रूप से, सुव्यवस्थित रूप से चलेगा। भव्य रूप से ही इस सम्पूर्ण कार्यक्रम की सफलता सुनिश्चित है। बस हमने थोड़ा प्रयास करना है।

मेरे प्रियजनों आप सब लोग इस महान, पुण्यदायक कार्यक्रम में सादर आमन्त्रित हैं। आओ मिलकर इन कार्यक्रमों की सफलता में अपना भी योगदान दें ताकि इससे जनित, इससे उत्पन्न पुण्यमय जो फल है उससे हमारी भाग्य रूपी झोली भर जाए। जो हमारे लिए इहलोक में क्या उस लोक में भी पाथेय का काम देगी। हमें हर प्रकार से संकटों से बचाएगी।

इसीलिए-प्रियजनों पूज्य चरणों ने बहुत ही गहन चिन्तन मनन के बाद वेदादि सद्ग्रन्थों का अनुशीलन, परिशीलन के बाद धर्म के सभी अंगों के आधार रूप यज्ञों की परम्परा अपनी तपस्थलि इस दयानन्द मठ चम्बा की भूमि पर चलाई। जब तक रहे इस परम्परा को बहुत भव्य तरीके से चलाते रहे। आगे भी यह परम्परा चलती रहे। यह आश्वासन हमसे लेकर इस संसार से विदा हुए। हम सब लोग उस दिव्यात्मा की इस स्वस्थ परम्परा को मिलजुल कर आगे बढ़ाएं इसी में हम सब का कल्याण छुपा हुआ है। यही हमारे पूज्य चरणों की चाहना थी। यही वे जीवन भर चाहते रहे। इसीलिए सम्प्रति उपस्थित इसी कर्म में **मनसः वाचा कर्मणः** से जुट जाएं। अन्न, जल, धन को तीन समाधिएं बना इस यज्ञ में इदन्नमम की भावना से यह मेरा नहीं है। कहते हुए उन्हें समर्पित कर दें। बस इसी में उनकी सार्थकता है। इसी में आप का भी भला है। परमात्मा की कृपा से प्राप्त सम्पदा को सफल करने का यह पुण्यमय अवसर है। अपने हाथों से इन संसाधनों को यज्ञादि कर्मों में समर्पित न करोगे तो एक दिन यही सम्पदाएं आप लोगों को छोड़ चली जाएगी। इसलिए जब-जब भी सम्पदाओं के सदुपयोग के लिए अवसर मिलता है। उसका लाभ उठाना चाहिए। चूकना नहीं चाहिए। एक समय वह भी आएगा जब चाहकर भी कुछ नहीं कर पाओगे। धन संपदा पास में होगी तो सही पर उस पर अधिकार किसी और का होगा, आपका नहीं। तब आप चाहोगे तब भी उसको धर्म कार्यों में आप उपयोग नहीं कर पाओगे। क्योंकि आप असहाय हो जाऐंगें। आपके अन्दर न वो शक्ति रहेगी न वो सामर्थ्य रहेगा। यह स्थिति हम सब के जीवन में एक न एक दिन आएगी। इसलिए बन्धुजनों समय का संसाधनों का सही उपयोग करें। उचित स्थान पर समय रहते उनका उपयोग करें। उचित स्थान पर समय रहते उनका उपयोग करें। आप हमारे हो हम आपके हैं। इसी सम्बन्ध के कारण इस पवित्र अवसर पर पुण्य लाभ के लिए आफ लोगों का आवाह्न कर रहा हूं। शेष आप लोगों के अपने विवेक पर छोड़ता हूं जो मेरा धर्म था। मेरा कर्तव्य है उसका पालन मैंनें करना था वह मैं कर रहा हूं। उसी कर्तव्य से बंधा मैं आप लोगों को इस पुण्यकर्म में आमन्त्रित कर रहा हूं। इसमें भाग लेने के लिए प्रेरित कर रहा हूं।

आचार्य महावीर सिंह

आर्य समाज मंदिर गुरुकुल विभाग फिरोजपुर में राशन वितरण समारोह सम्पन्न

आर्य समाज मंदिर गुरुकुल विभाग फिरोजपुर में यज्ञ का आयोजन किया गया। यज्ञ ब्रह्मा व वैदिक प्रवक्ता श्री देवराज शास्त्री जी कपूरथला विशेष रूप से पधारे। चित्र एक में आर्य समाज के सदस्य पवित्र आहूतियां प्रदान करते हुये जबकि चित्र दो में धवन परिवार गरीब महिलाओं को राशन वितरित करते हुये।

आर्य समाज मंदिर गुरुकुल विभाग फिरोजपुर में राशन वितरण समारोह किया गया। इससे पूर्व शान्ति यज्ञ का आयोजन किया गया। यज्ञ ब्रह्मा व वैदिक प्रवक्ता श्री देवराज शास्त्री जी कपूरथला विशेष रूप से पधारे। उन्होंने बड़ी श्रद्धा के साथ यज्ञ सम्पन्न करवाया। यजमान पद पर श्री सतीश धवन जी सपत्नीक बैठे। उन्होंने यज्ञ में पूरी रूचि दिखाई। यज्ञ के पश्चात अपने प्रवचन में यज्ञ ब्रह्मा श्री देवराज शास्त्री जी ने कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में मुक्ति के साधनों का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि जो मुक्ति चाहे वह जीवनमुक्त अर्थात् जिन मिथ्याभाषणादि पाप कर्मों का फल दु:ख है, उन को छोड़ सुखरूप फल को देने वाले सत्यभाषणादि धर्माचरण अवश्य करे। जो कोई दु:ख को छुड़ाना और सुख को प्राप्त करना चाहे वह अधर्म को छोड़ धर्म अवश्य करे। क्योंकि दु:ख का पापाचरण और सुख का धर्माचरण मूल कारण है।

सत्पुरूषों के संग से विवेक अर्थात् सत्यासत्य, धर्माधर्म कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निश्चय अवश्य करें, पृथक्-पृथक् जानें। और शरीर अर्थात् जीव पञ्चकोषों का विवेचन करें। एक अन्नमय जो त्वचा से लेकर अस्थिपर्यन्त का समुदाय पृथिवीमय है। दूसरा प्राणमय जिसमें प्राण अर्थात् जो भीतर से बाहर जाता, अपान जो बाहर से भीतर आता, समान जो नाभिस्थ होकर सर्वत्र शरीर में रस पहुंचाता, उदान जिस से कण्ठस्थ अन्न पान खींचा जाता और बल पराक्रम होता है, व्यान जिस से सब शरीर में चेष्टा आदि कर्म जीव करता है। तीसरा मनोमय जिसमें मन के साथ अहङ्कार, वाक्, पाद, पाणि, पायु, और उपस्थ पांच कर्म-इन्द्रियां हैं। चौथा विज्ञानमय जिसमें बुद्धि, चित्त, श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिह्वा और नासिका ये पांच ज्ञानेन्द्रियां जिन से जीव ज्ञानादि व्यवहार करता है। पांचवा आनन्दमय कोश जिसमें प्रीति प्रात्रता, न्यून आनन्द, अधिकानन्द, आनन्द और आधार कारण रूप प्रकृति है। ये पांच कोष कहाते हैं। इन्हीं से जीव सब प्रकार के कर्म, उपासना और ज्ञानादि व्यवहारों को करता है। यह शान्ति यज्ञ स्वर्गीय श्री विजय धवन जोकि आर्य समाज के सदस्य थे, उनकी पुण्य तिथि में करवाया जाता है। उनका परिवार कनाडा में रहता है परन्तु हर साल उनके भाई यह यज्ञ करवाते हैं। यह परिवार कनाडा में तो चला गया है परन्तु वैदिक रीति रिवाज से यज्ञ करवाना नहीं भूलता। उनका ध्यान आर्य समाज में हमेशा रहता है। आर्य समाज को समय समय पर यह परिवार दान भी देता रहता है। यह परिवार गरीब परिवारों में राशन वितरण समारोह का आयोजन भी समय समय पर करता रहता है। यह परिवार सर्दियों में गर्म स्वेटर, बच्चों को बूट, पाठ्य सामग्री तथा अन्य सामान बांटने का काम करते रहते हैं। उसी कड़ी में आज यज्ञ उपरान्त गरीबों को राशन वितरित किया गया। इस अवसर पर बहिन गीता जी ने एक बहुत सुन्दर भजन सुनाया। अंत में सभी को ऋषि लंगर खिलाया गया।

आर्य समाज अलावलपुर में कृष्ण जन्माष्टमी समारोह मनाया गया

आर्य समाज अलावलपुर एवं महर्षि दयानन्द माडल स्कूल अलावलपुर के संयुक्त तत्वावधान में योगीराज श्री कृष्ण चन्द्र जी महाराज का जन्म दिवस आर्य समाज मंदिर के प्रांगण में दिनांक 24 अगस्त 2019 को बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। आर्य समाज के वरिष्ठ उप प्रधान श्री परमानन्द जी, मंत्री श्री जय प्रकाश शास्त्री जी, श्री विश्वामित्र गुप्ता जी, श्रीमती रमा कक्कड़ जी, श्रीमती ऊषा भनोट प्रिंसीपल, श्रीमती शशि गुप्ता जी, अंकिता गुप्ता जी, स्कूल की अध्यापिकाएं एवं विद्यार्थी सम्मिलित हुये। श्री परमानन्द जी ने योगीराज श्री कृष्ण जी द्वारा दिये गये आदर्शों पर अपने विचार रखे। आर्य समाज के विद्वान वक्ता श्री जय प्रकाश जी शास्त्री ने योगीराज श्री कृष्ण के उज्जवल चरित्र पर विस्तार से चर्चा की और बताया कि किस प्रकार उन्होंने महाभारत के युद्ध में अधर्म के ऊपर धर्म को विजय दिलाई। उन्होंने कहा कि श्रावणी पर्व के एक सप्ताह के बाद आर्य संस्कृति के उन्नायक योगीराज श्रीकृष्ण जी का जन्मदिवस आता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी योगीराज श्रीकृष्ण के विषय में सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं कि योगीराज श्रीकृष्ण एक आप्त पुरूष थे और

आर्य समाज अलावलपुर एवं महर्षि दयानन्द माडल स्कूल अलावलपुर के संयुक्त तत्वावधान में योगीराज श्री कृष्ण जी के जन्म दिवस पर हवन यज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री परमानन्द जी एवं श्री जय प्रकाश शास्त्री जी ने उपस्थित बच्चों एवं अध्यापिकाओं को योगीराज श्री कृष्ण के जीवन बारे में बताया।

उन्होंने जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त कोई भी बुरा कार्य नहीं किया था। ऐसा महान् व्यक्तित्व जिसने विवाह के पश्चात 12 वर्ष दोनों पति-पत्नी ने ब्रह्मचर्य का व्रत धारण करके प्रद्युम्न जैसी ओजस्वी संतान को पैदा किया था। कृष्ण जनमाष्टमी के पर्व पर हमें श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में समाज में फैली अवधारणाओं को समाप्त करना होगा। बड़े शर्म की बात है कि योगीराज श्रीकृष्ण जैसे उज्जवल चरित्र के व्यक्तित्व को भोगी, रासलीला रचाने वाला, गोपियों के वस्त्र चुराने वाला, माखनचोर आदि नामों से पुकारा जाता है। श्रीकृष्ण के स्वरूप की झांकियां बनाकर उन्हें गोपियों के वस्त्र चुराते हुए, रासलीला रचाते हुए, चोरी करते हुए इस प्रकार से दिखाया जाता है कि सिर शर्म से झुक जाता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी लिखते हैं कि यदि भागवत पुराण न होता तो श्रीकृष्ण के सदृश महात्माओं की निन्दा नहीं होती। इसीलिए सभी आर्य बन्धुओं का कर्त्तव्य है कि श्रीकृष्ण जनमाष्टमी के पर्व पर कार्यक्रम का आयोजन करके श्रीकृष्ण के उज्जवल जीवन पर प्रकाश डाला जाए। पुराणों में वर्णित श्रीकृष्ण के स्वरूप का खंडन करके महाभारत और गीता के आधार पर उनके कर्मयोगी, धर्मरक्षक आदि स्वरूप को जनता के सामने रखें। इसीलिए जनमाष्टमी के पर्व पर सभी आर्य बन्धुओं को चिन्तन और मनन करके इस पर्व की महत्ता को जानने का प्रयास करना चाहिए। श्रावणी पर्व और श्रीकृष्ण जनमाष्टमी दोनों ही पर्व हमारी भारतीय संस्कृति की पहचान हैं।

–सत्य शरण गुप्ता

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित। सम्पादक–प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org